साधकों का
मासिक प्रेरणा

वार्षिक शुल्क रु. 30/-
आजीवन शुल्क रु. 500/-

बुद्धवर्ष 2554, भाद्रपद पूर्णिमा, 23 सितंबर, 2010 वर्ष 40 अंक 3

For Patrika in various languages, visit: http://www.vridhamma.org/Newsletter_Home.aspx

धम्मवाणी

अलङ्कतो चेपि समं चरेय्य, सन्तो दन्तो नियतो ब्रह्मचारी।
सब्बेसु भूतेसु निधाय दण्डं, सो ब्राह्मणो सो समणो स भिक्खु॥

– धम्मपद- १४२

(वस्त्र, आभूषण आदि से) अलंकृत रहते हुए भी यदि कोई शांत, दान्त, स्थिर (नियंत्रित), ब्रह्माचरणयुक्त है तथा सारे प्राणियों के प्रति दंड त्याग कर समता का आचरण करता है, तो वह ब्राह्मण है, श्रमण है, भिक्षु है।

विपश्यना और सांप्रदायिकता

विपश्यना में पहली बार सम्मिलित होने के पूर्व मैं कट्टर सनातन धर्मावलंबी होने के कारण भगवान बुद्ध को तो इसलिए श्रद्धापूर्वक नमन करता था क्योंकि वे हमारे भगवान विष्णु के नौवें अवतार थे। केवल एक ही बात के कारण उनकी शिक्षा मुझे प्रिय लगी थी, वह यह कि उन्होंने जात-पांत का विरोध किया था। परंतु उनकी अन्य शिक्षाओं के बारे में इतनी भ्रांत बातें सुन रखी थीं कि अपने आपको उनसे दूर रखने में ही भलाई समझता था।

लेकिन जब मैं किसी विशेष कारणवश पहली बार विपश्यना के शिविर में सम्मिलित हुआ तब यह देख कर बड़ा सुखद आश्चर्य हुआ कि इसमें शील, समाधि और प्रज्ञा ही सिखायी जाती है जिसमें कहां कोई दोष है? पहले शिविर से ही खूब समझ में आया कि विपश्यना मन के उन विकारों का निर्मूलन करती है, जिनसे कि तनाव बढ़ते हैं और मानसिक रोग पैदा होते हैं।

विपश्यना सीखने पर मेरे गुरुदेव ने मुझे प्रेरणा दी कि मैं बुद्धवाणी का भी अध्ययन करूं। विपश्यना के कारण भगवान की शिक्षा के प्रति जो भ्रांतियां थीं वे अपने आप दूर हो गयीं। परंतु जब उनकी वाणी पढ़ने लगा तब पढ़ते-पढ़ते बार-बार शरीर में रोमांच होने लगा। उनके एक-एक शब्द में अमृत भरा हुआ था।

एक बात जो मेरे लिए बिल्कुल नयी थी और मुझे बहुत भायी, वह थी "परावलंबन छोड़ कर स्वावलंबी बनो।" **अत्ता हि अत्तनो नाथो, अत्ता हि अत्तनो गति –** व्यक्ति स्वयं अपना मालिक है। अपनी सद्गति या दुर्गति हर व्यक्ति स्वयं बनाता है और सारी गतियों के परे मुक्त अवस्था भी स्वयं अपने प्रयत्न से ही प्राप्त करता है। बुद्ध जैसा कोई महान शिक्षक ही स्पष्ट शब्दों में कहेगा कि– **तुम्हेहि किच्चमातप्पं, अक्खातारो तथागता –** यानी, कोई तथागत होगा तो वह केवल मार्ग आख्यात करेगा, अपनी मुक्ति के लिए तपने का काम तुम्हें स्वयं करना पड़ेगा। इससे यह एक सच्चाई मन में स्पष्टतया पुष्ट हुई कि हम किसी बाह्य शक्ति पर आश्रित न हों। उससे कोई भीख न मांगें। किसी देवी, देवता या गुरु महाराज की कृपा से न हम दुःख से मुक्त हो सकते हैं और न ही भवसंसरण से। इस सच्चाई ने मेरे मन को गहराई तक झकझोर दिया। परावलंबन में ही पला हुआ मेरा मानस अब स्वावलंबन की जिम्मेदारी पाकर धन्य हुआ।

दूसरी बात जो मेरे मानस को बहुत प्रिय लगी वह भगवान की यह वाणी कि–

न जच्चा वसलो होति, न जच्चा होति ब्राह्मणो।
कम्मुना वसलो होति, कम्मुना होति ब्राह्मणो॥

– सुत्तनिपात- १३६

– जन्म के कारण कोई शूद्रातिशूद्र या ब्राह्मण नहीं होता, बल्कि अपने कर्मों के कारण ही होता है।

समाज में जात-पांत के कारण ऊंच-नीच और छूत-अछूत का भेदभाव मुझे बहुत बुरा लगता था। यद्यपि सनातनी परिवार में जन्मा और पला फिर भी पड़ोस में आर्यसमाज होने के कारण उसकी विचारधाराओं का भी मन पर बड़ा प्रभाव था। इसी प्रभाव के कारण जातिवाद की प्रथा समाज के लिए बहुत हानिकारक लगती थी। सौभाग्य से मेरी बचपन की स्कूली शिक्षा भी खालसा स्कूल में हुई। इसलिए सिक्ख गुरुओं की वाणी का भी मन पर बड़ा प्रभाव था। इसी प्रभाव के कारण दशमेश गुरु गोविंदसिंहजी की यह वाणी बचपन में ही बहुत प्रिय लगती थी कि– **मानव की जात सब एक कर मानिये।** अब भगवान की वाणी में भी यही पढ़ कर मन अत्यंत आह्लादित हुआ। उन्होंने यही कहा कि सब मनुष्यों की एक ही जाति होती है जैसे घोड़ों की, गधों की, हाथी इत्यादि की अपनी-अपनी एक-एक जाति होती है। तब यही बात मन में स्थिर हो गयी कि मनुष्य मनुष्य है, चाहे वह गोरा हो, काला हो, भूरा हो या पीला हो, इस या उस वर्ण, गोत्र, वर्ग अथवा किसी भी देश-काल का हो, मनुष्य सदा मनुष्य ही माना जायगा। मनुष्यों की अलग-अलग जाति नहीं होती। सभी मनुष्य धर्म धारण करके, अपने मानस को सुधार कर, पूज्य बन सकते हैं। भगवान का यह कथन मुझे बहुत प्रिय लगा।

एक अन्य तथ्य जिसने मेरे मानस को बहुत आह्लादित किया वह था भगवान द्वारा सांप्रदायिकता का विरोध। उन दिनों तित्थ माने तीर्थ को संप्रदाय कहते थे और तित्थिय यानी तैर्थिक को संप्रदायवादी। भगवान ने तित्थिय होने के कितने ही दोष दिखाये, यह जान कर मन बहुत प्रसन्न हुआ क्योंकि मैं भी संप्रदायवाद को समाज के लिए बहुत घातक मानता था। परंतु कभी-कभी एक प्रश्न मन में उठा करता था जिसका उन दिनों कोई समाधान न पा सका। वह यह था कि भगवान ने यदि बौद्धधर्म सिखाया और लोगों को बौद्ध बनाया तब तो यह भी संप्रदायवाद ही हुआ। मेरा मन यह मानने के लिए प्रस्तुत नहीं था कि संप्रदाय का विरोध करने वाले भगवान बुद्ध ने स्वयं कोई संप्रदाय स्थापित किया होगा।

आगे जाकर बुद्धवाणी, अर्थकथाओं, टीकाओं और अनुटीकाओं

का संपूर्ण पालि साहित्य मैं म्यंमा से भारत लेकर आया। सौभाग्य से आधुनिक वैज्ञानिक प्रगति के कारण कंप्युटर और सीडी-रोम का आविष्कार हुआ और उसमें यह सारा पालि साहित्य निवेशित कर दिया गया। तब यह जानने की उत्कंठा जागी कि क्या भगवान ने संप्रदायवाद के अर्थ में कहीं 'बौद्ध' और 'बौद्धधर्म' जैसे शब्दों का प्रयोग किया है? यह सही है कि पालि वर्णमाला में 'औ' स्वर है ही नहीं तब 'बौद्ध' कैसे कहते? परंतु यह भी सही है कि वर्णमाला में 'ओ' स्वर होने के कारण जहां कहीं 'बोद्ध' शब्द का प्रयोग हुआ है वहां भी संप्रदाय के अर्थ में **'बोद्धधर्म'** नहीं कहा गया। उनके अनुयायियों के लिए भी **'बोद्ध'** जैसे किसी संप्रदायवाचक शब्द का प्रयोग नहीं किया गया। अतः स्पष्ट है कि भगवान की मूल शिक्षा संप्रदायवादी नहीं थी। इसीलिए पूर्वकाल में सर्वव्यापी हुई और आज भी हो रही है। इसे जो धारण करे वही धार्मिक बन जाय, चाहे वह किसी भी वर्ण, गोत्र, वर्ग, संप्रदाय अथवा देश-विदेश का क्यों न हो। मेरा मन इस जानकारी से पूर्णतया आश्वस्त हुआ।

जब मैं विदेशों में धर्म सिखाने गया तब किसी ने मुझसे प्रश्न किया कि आपने कितने लोगों को बौद्ध बनाया? मैंने कहा एक को भी नहीं। फिर पूछा गया कि क्या आप बौद्धधर्म नहीं सिखाते? नहीं, बिल्कुल नहीं। तो क्या आप बौद्ध नहीं हैं? बिल्कुल नहीं। तदनंतर मैंने प्रश्नकर्ता को समझाया कि बुद्ध ने न कभी बौद्धधर्म सिखाया और न ही किसी को बौद्ध बनाया। भगवान ने धर्म सिखाया जो सार्वजनीन होता है, सब का होता है। भगवान ने धार्मिक होना सिखाया जो सभी हो सकते हैं। मैंने प्रश्नकर्ता को समझाया कि यही कारण है कि पूर्वकाल में भी बुद्ध की शिक्षा भारत तथा भारत के बाहर फैली और आज भी इसी कारण फैल रही है।

विपश्यना के शिविरों में किसी का संप्रदायांतरण नहीं किया जाता। किसी जाति, वर्ण, वर्ग, संप्रदाय या देशी-विदेशी का भेदभाव नहीं होता। सभी इसमें सम्मिलित होते हैं और लाभान्वित होते हैं।

मेरा यह कथन भारत के बाहर पड़ोसी बुद्धानुयायी देशों में पहुँचा तब वहां मेरी घोर निंदा होने लगी। मेरी जन्मभूमि म्यंमा, जहां मुझे भगवान का कल्याणकारी धर्म प्राप्त हुआ, वहां के प्रसिद्ध भिक्षु यह कह कर मेरी भर्त्सना करने लगे कि यह व्यक्ति हमसे बौद्धधर्म सीख कर गया और अब बाहर जाकर अपना ही कोई नया धर्म प्रचलित कर रहा है। बात बहुत बढ़ी। मेरे परम मित्र और गुरुभाई प्रो० ऊ को ले को हमारी 'आर्ट ऑफ लिविंग' पुस्तक बहुत पसंद आयी और वह उसका बर्मिज अनुवाद करने लगा। लेकिन जैसे ही निंदा का उपरोक्त वातावरण आरंभ हुआ, उसने भी मुझे दोषी मान कर पुस्तक का अनुवाद अधूरा छोड़ दिया।

परंतु सौभाग्य से म्यंमा का अवकाशप्राप्त राष्ट्राध्यक्ष (प्रेसीडेंट) डॉ. मौं मौं भारत आया और मुझसे इस विषय में वार्तालाप करके एक शिविर में बैठ गया। विपश्यना से वह बहुत प्रभावित और लाभान्वित हुआ। म्यंमा लौट कर उसने सरकार को समझाया कि गोयन्का विपश्यना द्वारा वस्तुतः भगवान बुद्ध की सही और शुद्ध शिक्षा ही सिखा रहा है। शील, समाधि, प्रज्ञा का अष्टांगिक मार्ग ही सिखा रहा है। उसके कथन से प्रभावित होकर सौभाग्य से म्यंमा सरकार ने मुझे राज्य-अतिथि के रूप में आमंत्रित किया। वहां के प्रमुख विद्वान भिक्षुओं से मेरी चर्चा हुई। मुझे यह जान कर सुखद आश्चर्य हुआ कि वहां के सभी विद्वानों ने मेरा कथन सहर्ष स्वीकार कर लिया।

ठीक इसी प्रकार श्रीलंका के भिक्षुओं ने भी मेरे विरुद्ध अनेक लेख लिखे। परंतु यू.एन.ओ. में मेरे जो दो प्रवचन हुए उन्हें सुन कर अमेरिका में श्रीलंका का राजदूत विस्मयविभोर हो गया। वह मेरे पास आया और बातचीत करके खूब समझ गया कि बुद्ध की शिक्षा को बौद्धधर्म न कह कर भी मैं भगवान बुद्ध के शुद्ध धर्म का ही प्रचार-प्रसार कर रहा हूं। इसीलिए भारत के तथा सारे विश्व के, सभी संप्रदायों के लोग इसे सहर्ष स्वीकार कर रहे हैं। वह पूर्णतया आश्वस्त और प्रसन्न हुआ और श्रीलंका के प्रेसीडेंट श्री महिंद राजपक्षे को सारी बात समझायी। श्रीलंका के प्रेसीडेंट ने भी मुझे राज्य-अतिथि के रूप में आमंत्रित किया। वहां के सर्वोच्च भिक्षुसंघ के विद्वानों के बीच मेरे अनेक प्रवचन हुए। सब की शंकाएं दूर हुईं। सभी प्रसन्न हुए।

मैंने देखा कि जीवन में प्रशंसा के साथ-साथ निंदा भी होती ही रहती है। दोनों अवस्थाओं में समरस रहना ही विपश्यना का सफल प्रयोग है।

अब देखता हूं कि भारत में कुछ बंधु सच्चाई को बिना समझे मेरी निंदा करने में लगे हैं। मैं इससे रंच मात्र भी विचलित नहीं होता। जानता हूं कि समय पाकर वे भी सच्चाई को समझेंगे और निंदा के दुष्कर्म से बचेंगे।

प्रश्न उठता है कि जब भगवान ने बौद्धधर्म नहीं सिखाया, कोई संप्रदाय स्थापित नहीं किया तब आज के भारत में तथा सभी बुद्धानुयायी देशों में यह संप्रदायवादी 'बौद्ध' शब्द कब और कैसे चल पड़ा और कैसे स्वीकार कर लिया गया? यह एक विशेष अनुसंधान का विषय है। अब तक जो अनुसंधान हुआ है उसके अनुसार बुद्ध के बाद ५०० वर्ष तक 'बौद्धधर्म' शब्द का प्रयोग कहीं नहीं हुआ। इस विषय में अभी और अधिक अनुसंधान करने की आवश्यकता है।...

प्रश्न यह भी उठता है कि भारतरत्न बाबासाहेब अंबेडकर जैसे प्रकांड विद्वान ने इस सांप्रदायिक बौद्ध शब्द का प्रयोग क्यों किया?

एक कारण तो बहुत स्पष्ट है कि जब दुनिया के सभी बुद्धानुयायी देशों के लोग इस शब्द का प्रयोग करने लगे और भगवान के न चाहने पर भी जब उनके नाम पर संप्रदाय बन गया तब बाबासाहेब को भी यही शब्द अपनाना पड़ा।

शील, समाधि, प्रज्ञा का आर्य अष्टांगिक मार्ग ही भगवान की शिक्षा है, जो अब 'बौद्धधर्म' कहलायी जाने लगी। भगवान ने लोगों को विपश्यना द्वारा यही शिक्षा सिखायी। आज भी विपश्यना द्वारा बुद्ध की यही शिक्षा सिखायी जाती है। यदि बौद्धधर्म के नाम पर बुद्ध की शिक्षा प्रसारित की जाती तो अन्य समाज के लोग इस ओर झांकते भी नहीं। जबकि आज भारत में जाति, वर्ण, गोत्र को प्रमुखता देने वाले ही नहीं बल्कि विश्व के सभी संप्रदायों के लोग 'धर्म' के नाम से इसे स्वीकार कर रहे हैं और जन्म के नाम पर मनुष्य-मनुष्य के प्रति चल रहा दूषित भेदभाव दूर होने का एक नन्हा-सा सही कदम उठाया जा रहा है। बुद्ध की सही शिक्षा फैलेगी तो जन्म के नाम पर भेदभाव नहीं टिक सकेगा। ऊंच-नीच का भेदभाव सदाचरण और दुराचरण के आधार पर होगा।

मैं बाबासाहेब अंबेडकर का प्रबल प्रशंसक हूं। सदियों से ही नहीं, बल्कि सहस्त्राब्दियों से भारत में इतनी बड़ी संख्या में लोगों को पीढ़ी-दर-पीढ़ी पद-दलित और अपमानित किया जाता रहा। तभी उन्होंने जन्म पर आधारित इस दूषित वर्णव्यवस्था का विरोध किया। बाबासाहेब स्वयं भी इस दूषित व्यवस्था के भुक्तभोगी थे। इसीलिए उन्होंने इस दूषित व्यवस्था के बाहर निकल कर किसी अन्य व्यवस्था में सम्मिलित होने का निश्चय किया। उन्होंने जो ऐतिहासिक काम किया उसे ऐसे ही करना आवश्यक था। उन्होंने जिस महत्त्वपूर्ण कार्य का बीड़ा उठाया उसके लिए एक सामूहिक संगठन को तैयार करना अनिवार्य था, और यही किया उन्होंने। अब वे पीड़ित, दलित लोग अपने आपको बौद्ध कह कर ही उस दूषित दुरवस्था वाले समाज से

मुक्त हुए। यही अपने आप में बड़ा काम था जो बाबासाहेब जैसा पुरुषार्थी ही कर सकता था। इसी कारण उनके द्वारा संप्रदायवादी शब्दों का प्रयोग किये जाने पर भी, मैं बाबासाहेब की अनथक प्रशंसा करता हूं। लेकिन मेरा लक्ष्य तो भारत तथा विश्वभर में विपश्यना के प्रचार-प्रसार द्वारा भगवान बुद्ध की सांप्रदायिकताविहीन सार्वजनीन मौलिक शिक्षा की पुनर्स्थापना करनी है।

बाबासाहेब का जो मिशन था, जो संकल्प था वह बहुत मात्रा में सफल हुआ परंतु पूर्णतया नहीं। जात-पांत का विष अभी भी बहुत फैला हुआ है। जब सारा देश बुद्ध की जात-पांत विहीन शिक्षा को ग्रहण कर लेगा तभी यह विष दूर होगा और लोक-कल्याण होगा।

इस संबंध में सामूहिक दीक्षा के अवसर पर बाबासाहेब ने जो वक्तव्य दिये वे बहुत सार्थक और महत्त्वपूर्ण हैं –

"उन्होंने दीक्षित हुए लोगों को कहा कि अब आपकी बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। आपका व्यवहार ऐसा होना चाहिए जिससे कि दूसरे लोग आपका आदर और सम्मान करें। इस धर्म को स्वीकार करके ऐसा मत समझ लेना कि यह धर्म हमारे गले में बँधे हुए एक मुर्दे के समान है। (यानी यह आपके लिए बोझ नहीं बनेगा।) जहां तक बौद्धधर्म का प्रश्न है भारत भूमि इससे पूर्णतया शून्य है। इसलिए आपका यह कर्तव्य बनता है कि आप इस **उत्तम धर्म को सही ढंग से पालने की प्रतिज्ञा करें**। कहीं ऐसा न हो जाय कि महार लोगों ने इस धर्म को निंदाजनक स्थिति में पहुँचा दिया। अतः आज आप सभी प्रतिज्ञा करें कि इस धर्म का पालन करते हुए आप न केवल अपना बल्कि अपने साथ-साथ अपने देश का और सारे संसार का उद्धार करेंगे। क्योंकि बौद्धधर्म से ही संसार का उद्धार होगा। संसार में जब तक सब को समुचित न्याय नहीं मिलेगा, तब तक शांति नहीं हो सकती।" *– (डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर – राइटिंग्स एंड स्पीचेज, पृ. ५४४)*

"भगवान बुद्ध के अनुयायियों का संघ सागर की भांति है, जिसमें सब एक समान हैं। जैसे समुद्र में मिल जाने पर गंगा या महानदी के जल को अलग नहीं किया जा सकता, उसी प्रकार बुद्ध के संघ में सम्मिलित होने पर जात-पांत से छुटकारा पाकर हम एक हो जाते हैं।" *– (डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर – राइटिंग्स एंड स्पीचेज, पृ. ५४०)*

नागपुर की एक प्रेस कांफरेंस में बाबासाहेब ने यह भी कहा –

"मैं चाहता हूं कि सारा भारत बौद्धधर्म स्वीकार करे।"

– (नागपुर प्रेस कांफरेंस, १३ अक्टूबर, १९५६)

अर्थात बाबासाहेब चाहते थे कि सारा देश बुद्ध की शिक्षा को ग्रहण करे। भगवान बुद्ध की शिक्षा शील, समाधि और प्रज्ञा का आर्य अष्टांगिक मार्ग है। इसे जीवन में उतारने के लिए उनकी दी हुई विपश्यना एक व्यावहारिक शिक्षा है। इसमें शील, समाधि और प्रज्ञा का ही क्रियात्मक अभ्यास करवाया जाता है। इसके शिविरों में बिना किसी भेदभाव के सभी जाति, वर्ण, गोत्र के लोग सम्मिलित होते हैं। सभी तीन रत्नों की शरण तथा पंचशील ग्रहण करके विपश्यना सीखते हैं। उनमें से जब कोई साधना का अभ्यास करते हुए धर्म में पुष्ट होता है तब उसे आचार्य पद का दायित्व सौंपा जाता है। धर्म की गद्दी पर बैठने वाला चाहे जिस जाति, वर्ण, गोत्र का व्यक्ति हो, वह धर्म का प्रतीक होता है। इसीलिए लोग उसे नमन करते हैं और उससे धर्म सीखते हैं। धर्म सिखाने वाले में और धर्म सीखने वालों में जाति, वर्ण, गोत्र को लेकर कोई भेदभाव नहीं होता। विपश्यना समता का पाठ पढ़ाती है। इससे समाज में ऊंच-नीच का जो दूषित भेदभाव व्याप्त है उसे दूर करने का यह एक नन्हा-सा, पर समुचित कदम उठाया जा रहा है जो समय पाकर बलवान होगा और समस्त समाज का कल्याण करेगा।

इसीलिए जाति और वर्ण को बहुत महत्त्व देने वाले जो लोग हैं, उनके भी अनेक नेता जब शिविरों में बैठे तब धीरे-धीरे सच्चाई को समझने लगे हैं।

दिल्ली के मेयर श्री हंसराज गुप्ताजी, विश्व हिंदू परिषद के उपाध्यक्ष श्री गिरिराज किशोरजी, विश्व हिंदू परिषद के महामंत्री श्री बालकृष्ण नाईकजी, राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के अध्यक्ष श्री रज्जूभैयाजी, संघ के जनरल सेक्रेटरी श्री शेषाद्रिजी तथा अन्य अनेक लोग जब विपश्यना के शिविरों में सम्मिलित हुए तब बुद्ध की शिक्षा के प्रति उनकी भ्रांतियां दूर हुईं। विपश्यना की उपयोगिता को उन्होंने स्वीकार किया। कोई भी समझदार व्यक्ति सच्चाई को समझ कर स्वीकार कर ही लेता है।

परिणामस्वरूप विश्व हिंदू परिषद के अध्यक्ष श्री अशोक सिंहलजी ने यह सत्य घोषणा की कि आज जो 'मनुस्मृति' प्रचलित है, उसे हम अपना धर्मग्रंथ नहीं मानते। यह वही मनुस्मृति है जिसे बाबासाहेब ने सार्वजनिक समारोह में जलाया था और उस समय उसका कितना बड़ा विरोध हुआ था। आज उन्हीं का एक महान नेता घोषणा करता है कि इसे हम धर्मग्रंथ ही नहीं मानते, क्योंकि इसमें बहुत सारी अनुचित बातें भरी हुई हैं।

इसके अतिरिक्त एक अन्य बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य भी संपन्न हुआ। विश्व हिंदू परिषद के अध्यक्ष श्री सिंहलजी के माध्यम और सहयोग से कांची के शंकराचार्यजी से निम्न तीन विषयों पर स्वीकृति करवायी गयी। तत्पश्चात मेरी और शंकराचार्यजी की सहमति से एक प्रेस कांफरेंस बुलायी गयी, जिसमें निम्नलिखित तथ्यों की स्वीकृति का उद्घाटन किया गया।

जगद्गुरु श्रद्धेय शंकराचार्य श्री जयेन्द्र सरस्वतीजी और विपश्यनाचार्य गुरुजी श्री सत्यनारायण गोयन्काजी की संयुक्त प्रेस विज्ञप्ति

स्थलः महाबोधि कार्यालय, सारनाथ (वाराणसी) (उत्तर प्रदेश)
समयः दोपहरः ३:३०, दिनांक १२-११-१९९९.

जगद्गुरु कांची कामकोटि पीठ के श्रद्धेय शंकराचार्य श्री जयेन्द्र सरस्वतीजी और विपश्यनाचार्य गुरुजी श्री सत्यनारायण गोयन्काजी की सौहार्दपूर्ण वार्तालाप की संयुक्त विज्ञप्ति प्रकाशित की जा रही है। दोनों इस बात से सहमत हैं और चाहते हैं कि दोनों प्राचीन परंपराओं में अत्यंत स्नेहपूर्वक वातावरण स्थापित रहे। इसे लेकर जिन पड़ोसी देशों के बन्धुओं में किसी कारण किसी प्रकार की गलतफहमी पैदा हुई हो, उसका शीघ्रातिशीघ्र निराकरण हो। इस संबंध में निम्न बातों पर सहमति हुई :–

१) किसी भी कारण से पूर्वकाल में पारस्परिक मतभेदों को लेकर जो भी साहित्य निर्माण हुआ, जिसमें भगवान बुद्ध को विष्णु का अवतार बता कर जो कुछ लिखा गया, वह पड़ोसी देश के बंधुओं को अप्रिय लगा, इसे हम समझते हैं। इसलिए दोनों समुदायों के पारस्परिक संबंधों को पुनः स्नेहपूर्वक बनाने के लिए हम निर्णय करते हैं कि भूतकाल में जो हुआ, उसे भुला कर अब हमें इस प्रकार की किसी मान्यता को बढ़ावा नहीं देना चाहिए।

२) पड़ोसी देशों में यह भ्रांति फैली कि भारत का हिंदू समुदाय बुद्धानुयायिओं पर अपना वर्चस्व स्थापित करने के लिए इन कार्यशालाओं का आयोजन कर रहा है। यह बात उनके मन से सदा के लिए निकल जाय, इसलिए हम यह प्रज्ञापित करते हैं वैदिक और बुद्ध-श्रमण की परंपरा भारत की अत्यंत प्राचीन मान्य परंपराओं में से हैं। दोनों का अपना-अपना गौरवपूर्ण स्वतंत्र अस्तित्व है। किसी एक परंपरा द्वारा अपने आपको ऊंचा और दूसरे को नीचा दिखाने का काम परस्पर द्वेष, वैमनस्य बढ़ाने का ही कारण बनता है। इसलिए भविष्य में कभी ऐसा न हो। दोनों परंपराओं को समान आदर एवं गौरव का भाव दिया जाय।

३) सत्कर्म के द्वारा कोई भी व्यक्ति समाज में ऊंचा स्थान प्राप्त कर सकता है और दुष्कर्म के द्वारा पतित होता है। इसलिए हर व्यक्ति सत्कर्म करके तथा काम, क्रोध, मद, मोह, लोभ, मात्सर्य, अहंकार इत्यादि अशुभ दुर्गुणों को निकाल कर अपने आप को समाज में उच्च स्थान पर स्थापित करके सुख-शांति का अनुभव कर सकता है।

उपर्युक्त तीनों बातों पर हम दोनों की पूर्ण सहमति है तथा हम चाहते हैं कि

Registered No. NSK/46/2009-2011

WPP Postal License No. AR/Techno/WPP-05/2009-2011

भारत के सभी समुदाय के लोग पारस्परिक मैत्री भाव रखें तथा पड़ोसी देश भी भारत के साथ पूर्ण मैत्री भाव रखें।

इस घोषणा द्वारा यह स्वीकृत किया गया कि व्यक्ति जन्म से ऊंचा या नीचा नहीं होता, चाहे वह कहीं भी जन्मा हो। यदि वह सत्कर्म करता है तो समाज में पूज्य ही माना जायगा।

इसके बाद केवल एक को छोड़ कर बाकी सभी शंकराचार्यों ने और अनेक महामंडलेश्वरों ने भी इस समझौते पर अपनी स्वीकृति के हस्ताक्षर किये। यह सब विपश्यना के आधार पर हुआ। परंतु इस समझौते की सच्चाई को समाज में फैलाने का महत्त्वपूर्ण कार्य अभी होना बाकी है। समझौते की यह सच्चाई लोगों तक फैलेगी तभी उनकी भी भ्रांतियां दूर होंगी। अब समय आ गया है कि इसका अधिक से अधिक प्रकाशन करके, इस पर अमल किया जाय, जिससे कि देश की एक बड़ी समस्या का समाधान हो सके।

भारत के बाहर अन्य देशों में जात-पांत का भेदभाव नहीं है, परंतु कुछ एक पश्चिमी देशों में काले-गोरे का भेद अवश्य है। अब काले और गोरे दोनों ही विपश्यना में सम्मिलित हो रहे हैं। हब्सी जाति के कुछ लोगों को विपश्यना में पुष्ट करके आचार्य पद पर बैठाया और वे विपश्यना के शिविर लगाते हैं, जिनमें काले और गोरे सभी सम्मिलित होते हैं।

भगवान बुद्ध की शिक्षा ग्रहण करने वाला व्यक्ति जन्म के आधार पर मनुष्य-मनुष्य में कोई भेदभाव नहीं करता। विपश्यना धीमी गति से यही काम कर रही है। आज यह बहुत नन्हा-सा प्रारंभिक प्रयोग है जो आगे चल कर प्रबल रूप से संसार के सारे विपश्यी साधकों को प्रभावित करेगा और बाबासाहेब का सपना पूरा होगा। इसका मुझे पूर्ण विश्वास है। इसीमें सब का मंगल समाया हुआ है। भारत का ही नहीं, सारी मानव जाति का कल्याण समाया हुआ है।

मंगलमित्र,
सत्यनारायण गोयन्का

दोहे धर्म के

बढ़ा धर्म के नाम पर, संप्रदाय पुरजोर।
जन जन मन व्याकुल हुआ, दुख छाया सब ओर॥

संप्रदाय का मद बढ़े, धर्म तिरोहित होय।
अपना भी अनहित करे, जन जन अनहित होय॥

धर्म न हिन्दू बौद्ध है, धर्म न मुस्लिम जैन।
धर्म चित्त की शुद्धता, धर्म शांति सुख चैन॥

धर्म सार पाया नहीं, पकड़े छिलके रूढ़।
संप्रदाय को धर्म जो, समझ रहा, वह मूढ़॥

छिलकों में उलझा रहा, पकड़ न पाया सार।
बिना सार संसार को, कौन कर सका पार?

संप्रदाय अनहित करे, धरम करे कल्याण।
धरम धार मंगल सधे, तन मन पुलकित प्राण॥

केमिटो टेक्नोलॉजीज (प्रा०) लिमिटेड
८, मोहता भवन, ई-मोजेस रोड, वरली, मुंबई- 400 018
फोन: 2493 8893, फैक्स: 2493 6166
Email: arun@chemito.net
की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धरम रा

जात-पांत रो बावळो, सीस चढायो भूत।
धरम छूटग्यो साचलो, रहग्यी छूआछूत॥

संप्रदाय रो संखियो, जात-पांत रो ज्हैर।
सेवन करतो ही रह्यो, कठै खेम, सुख, खैर?

जात-पांत रो, बरण रो, किसो'क गरब गुमान।
मूढ होयग्या, धरम रो, रह्यो न नाम-निसाण॥

सै कूआं मँह एक सी, पड़ी मोह री भंग।
संप्रदाय री वारुणी, सैं का बिगड़्या ढंग॥

अपणै मत री मान्यता, मति पर आगळ देय।
संप्रदाय री वारुणी, धरम न समझण देय॥

संप्रदाय प्यारो लगै, धरम न धारै कोय।
संप्रदाय मँह सुख कठै? धरम धार सुख होय॥

एक साधक
की मंगल कामनाओं सहित

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक: राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी-422403, दूरभाष : (02553) 244086, 244076.
मुद्रण स्थान : अक्षर चित्र प्रिंटिंग प्रेस, 69- बी रोड, सातपुर, नाशिक-422007. **बुद्धवर्ष** 2553, **भाद्रपद पूर्णिमा,** 23 **सितंबर, 2010**

वार्षिक शुल्क रु. **30/-,** US $ 10, **आजीवन शुल्क** रु. **500/-,** US $ 100. **'विपश्यना' रजि. नं. 19156/71. Registered No. NSK/46/2009-2011**

Licensed to post w**ithout Prepayment of postage** -- WPP Postal License No. AR/Techno/WPP-05/2009-2011
Posting day- **Purnima of Every Month,** Posted at **Igatpuri-422403,** Dist. Nashik (M.S.)

If not delivered please return to:-

विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - 422403
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
फोनः (02553) 244076, 244086, 243712, 243238
फैक्सः (02553) 244176; **Email:** info@giri.dhamma.org
Website & **Online booking:** www.vridhamma.org